IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

चम्पारण के चीनी उद्योग का समाज एवं अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

डॉ० विजय कुमार

एसोसिएट प्रोफेसर

लंगट सिंह महाविद्यालय, मुजफ्फरपुर।

बी0 आर0 ए0 बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर।

सर्वविदित है कि किसी भी देश की अर्थव्यवस्था में कृषि एवं उसके उत्पादों पर आधारित उद्योगों का महत्वपूर्ण स्थान होता है, जो उस देश की सामाजिक–आर्थिक जीवन को भी प्रभावित करता है। इसी संदर्भ में चम्पारण की कृषि एवं उस पर आधारित उद्योगों, खासकर गन्ना का वहां के समाज एवं अर्थव्यवस्था पर क्या प्रभाव पड़ा या पड़ रहा है की पड़ताल करना प्रस्तुत विषय वस्तु की समीचिनता है।

चम्पारण की कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था में गन्ने की खेती का बड़ा ही महत्वपूर्ण स्थान है जिसके कारण वहाँ अनेक चीनी बनाने वाले कारखाने स्थापित हुए, जो आज भी कृषकों के लिए नकदी आय का मुख्य स्रोत बना हुआ है। चम्पारण के चीनी उद्योगों के लिए तैयार माल के संदर्भ में (पुरे बिहार सहित) ''शुगरकेन एण्ड शुगर डेवलपमेंट कमिटी (1956) ने अपने रिपोर्ट में लिखा कि ''कृषि आधारित प्रकृति के कारण यह उद्योग केवल तैयार माल का मूल्य ही धारण नहीं करता अपितु इसके महत्व का निर्धारण राज्य की कृषि क्षेत्र में इसकी अधिक महत्वपूर्ण भूमिका के आधार पर किया जाना चाहिए।[1] इस प्रकार परिलक्षित होता है कि चम्पारण क्षेत्र में चीनी उद्योगों के स्थापित होने से यहाँ के ग्रामीण क्षेत्रों में, खासकर गन्ना उत्पादकों तथा इसके खेती में लगे श्रमिकों की आय में वृद्धि हुई। तत्पश्चात् उनके क्रय शक्ति में वृद्धि होना स्वाभाविक था।

उल्लेखनीय है कि चम्पारण में चीनी उद्योगों के विकास से अर्थव्यवस्था को गति तो मिली ही; साथ ही इसके लिए जरूरी उत्पाद गन्ना की कटनी, गाड़ीवानों, इसके परिवहन से सम्बद्ध लोगों, सह–उत्पादकों, तैयार माल के परिवहन से जुड़े रेल कर्मचारियों आदि को भी परोक्ष रोजगार मिले। इसके अलावा इस उद्योगों में वित्तीय साझीदारों, बैंकों, बीमा कम्पनियों एवं चीनी के व्यापारियों के लिए भी रोजगार के अवसर सृजित हुए। अतएव हम पाते हैं कि स्वतंत्रता के बाद के वर्षों में सफेद चीनी के निर्यात से चम्पारण की मिलों को विशिष्ट पहचान मिली, साथ ही इसने महत्वपूर्ण विदेशी मुद्रा अर्जित करने में भी बड़ी उपलब्धि प्राप्त की।

बीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक में यहाँ अनेक चीनी मिलें खुली जिसके चलते यहाँ गन्ने की खेती को बढ़ावा मिला। 1920 के आसपास यहाँ 20 हजार एकड़ में गन्ना की खेती हो रही थी, जो पचास के दशक में बढ़कर एक लाख एकड़ क्षेत्रफल तक फैल गई। इस खेती के अन्तर्गत दो तरह की प्रणालियाँ थी, (क) जीराती प्रणाली तथा (ख) असामीवार प्रणाली। असामीवार प्रणाली के दो भाग (i) तीन कठिया प्रथा तथा (ii) खुस्की करार। जीराती प्रणाली के तहत मिलें अपने फार्मों अथवा भूमि में सीधे गन्ना उपजाती थी। तीनकठिया प्रणाली के बारे में बहुत कुछ कहा जा चुका है, जबकि खुस्की वह प्रणाली थी जिसके अन्तर्गत रैयत अग्रिम लेकर निर्धारित भूमि पर एक वर्ष के लिए गन्ना उपजाने का करार करता था।

यों कहे तो, तीन कठिया प्रणाली की अपेक्षा खुस्की करार ज्यादा सुग्राह्य था। क्योंकि इससे जुड़ने वाले किसानों का शोषण ज्यादा नहीं होता था। इस करार से रैयत आसानी से निकल सकता था तथा उसके मर्जी के बिना पुनः इसका नवीकरण नहीं हो पाता था। साथ हीं खुस्की प्रणाली में गन्ना उत्पादक बाजार के उतार–चढ़ाव के आधार पर शर्त्तें रख सकता था।[2]

दरअसल, 1950 के दशक आते–आते जब नील की खेती विलोपित होने के कारण चम्पारण में किसानों और कृषि श्रमिकों के जीविका का मुख्य स्रोत गन्ना की खेती हो गई। यह एक ऐसी फसल थी, जो प्राकृतिक आपदाओं, जैसे– बाढ़, अकाल, सुखा आदि के कोप से बचकर भी अच्छी फसल देती थी। इस वजह से गन्ने की खेती का उत्क्रमणीय विकास होने से व्यापक पैमाने पर रोजगार सृजित हुए। फलतः 1940 के दशक तक इस जिले में नौ बड़े आधुनिक चीनी कारखानों का उदभव हो चुका था जिसने चीनी उद्योग के क्षेत्र में छायी मंदीपूर्ण अर्थव्यवस्था में स्थायित्व, रोजगार एवं समृद्धि के द्वार खोल दिए।

हालांकि, नील की खेती के उलट सरकार गन्ना उद्योग एवं उसके खेती पर 1934–35 से नजरें गराई हुई थी और सरकार द्वारा पारित ''शुगर केन एक्ट 1934'' में वर्णित प्रावधानों के अनुरूप ही बिहार सरकार गन्ने का न्यूनतम मूल्य निर्धारित करती थी। लेकिन 1942 में चीनी के मूल्य निर्धारण करने का अधिकार सरकार ने ले ली। लेकिन मूल्य निर्धारण की प्रक्रिया में दोष यह था कि उत्पादकों के गनने के किस्म पर विचार किए बिना ही सभी के लिए समान मूल्य तय कर दिया जाता था। इसके चलते कृषकों में गुणवत्तापूर्ण गन्ना उत्पादन के प्रति कोई उत्साह नहीं रहा। दूसरे, गन्ने के कुल मूल्य का भुगतान भी एकमुश्त नहीं किया जाता था तथा कुल मूल्य का 20 से 25 फीसदी मिल मालिकों के पास ही रह जाता था जिसपर कोई ब्याज भी नहीं मिलता था। फलतः चम्पारण में गन्ने की नस्ल या किस्में सुधारने के प्रति किसानों में अरूची का भाव रहा।[3]

इसका दूसरा पहलू यह भी है कि ''चम्पारण एग्रेरियन एक्ट'' के प्रभावी हो जाने के बाद भी कृषकों का शोष्ज्ञण मिल मालिकों के द्वारा जारी रहा। लेकिन शोषण के तरीकों के जारी रहने की बात का खण्डन होता है डॉ० आर० एस० सिंह के इस धारणा से कि ''चम्पारण में चीनी उद्योग की एक महत्वपूर्ण विशेषता है मिलों और गन्ना उत्पादक कृषकों के बीच मधुर सम्बन्ध का होना जिसके कारण इस उद्योग में प्रगति हुई।[4]

लेकिन श्री सिंह के धारणा का खण्डन लोहिया कमीशन के रिर्पोटों एवं उसके समक्ष दिए गए बयानों से होता है। चीनी मिलों के पास बड़े फर्मों की सम्पत्ति शोषण का प्रतीक ही जान पड़ता है। क्योंकि इन मिलों के नियेाजकों ने चम्पारण की कृषकों के भोलेपन का लाभ उठाकर 30 रूपये से 200 रूपये प्रति एकड़ के भाव से उनकी जमीन खरीद ली जबकि जमीन की वास्तविक कीमत 1000 रूपये प्रति बीघा थी। 1950 में विभिन्न चीनी मिलों के पास चार करोड़ रूपये की भूमि थी जिसके एवज में उन्होंने मात्र बीस लाख रूपये चुकाये थे।[5] यहाँ के नौ बड़े चीनी मिलों के पास भू–क्षेत्र की बात करें, तो स्पष्ट होता है कि 1950 में इनके पास 40 हजार एकड़ भूमि थी जिस पर बड़े–बड़े फार्म थे। 1931 में 1950 के बीच महज 20 वर्षों की छोटी सी अवधि में इन मिलों के प ास इतना ज्यादा जमीन का एकत्र हो जाना स्वयं में आश्चर्यजनक सा नहीं लगता क्या?

इसके पीछे अनेक व्यवहारिक तथ्य उभरकर सामने आते हैं। उनमें से एक वो कि इन मिलों के आस–पास के किसानों के मन में चीनी मिलों के चालू होने से स्वभाविक प्रक्रिया तो यह होनी चाहिए थी कि गन्ने की पैदावार की अधिक कीमत मिलने की प्रत्याशा में जमीन को न बेचकर उस पर अपना अधिकार बनाये रखते। जबकि बिहार के अन्य जिलों में जहाँचीनी मिलें है, वहाँ मिल मालिक इस प्रकार के फार्म खड़ा नहीं कर सके।[6]

इन तमाम प्रश्नों का वाजिब उत्तर मिलता है 1947 में गठित चम्पारण फार्म जाँच कमीशन के द्वारा नई दिल्ली से 1950 में प्रकाशित रिपोर्ट से। इस तीन सदस्यीय आयोग में डॉ० राममनोहर लोहिया, रामनन्दन मिश्र तथा खुर्शेद बेन थे। इस कमीशन की रिपोर्ट में उल्लेखित है कि ''इन प्रश्नों का उत्तर किसानों के दस हजार बयानों में मिलेगा, जो कमीशन के सामने पेश किए गए हैं। ये बयान बताते हैं कि किस प्रकार प्राकृतिक, ऐतिहासिक तथा आर्थिक कारणों की सहायता लेकर मिल मालिकों ने 30 रूपये से 200 रूपये प्रति एकड़ के हिसाब से चम्पारण के किसानों की उस जमीन को खरीद लिया जिसकी औसत कीमत 1000 रूपये प्रति बीघा थी।''[7]

चम्पारण में चीनी मिलों की शुरूआत से प्रारम्भ में कृषकों को आर्थिक लाभ जरूर मिले तथा रोजगार के अवसर अवश्य बढ़े परन्तु बदलते आर्थिक परिदृश्य में किसान अपना भूमि बचाने में नाकामयाब रहे। क्योंकि उत्पादों का उचित मूल्य न मिलने से कृषकों पर कर्ज का बोझ बढ़ता चला गया। इस क्षेत्र में साहूकारों तथा को–ऑपरेटिव बैंकों ने

किसानों को ऋण तो दिया लेकिन इसके अदायगी नहीं करने के एवज उन्होंने किसानों की जमीन लेकर मिल मालिकों के हाथों बेंच दिया। उसके अतिरिक्त दूसरा तरीका मिल मालिजक यह अपानाते थे कि किसानों के जमीन के चारों तरफ की जमीन खरीदकर अपने खेतों में उक्त किसानों को हल–बैल लेकर जाने से रोक दिया जाता था। इस प्रकार किसान को जमीन बेचने के लिए बाध्य किया जाता था। एक अन्य वाक्यात यह मिलता है कि भोलादास, साकिम लक्ष्मण टोला, थाना मोतिहारी निवासी ने कोऑपरेटिव बैंक से कर्ज लिया था जिसकी अदायगी न करने पर उनके एक एकड़ जमीन सौ रूपये के कर्ज में लेकर कोऑपरेटिव बैंक ने मोतीहारी के मिल के हाथों बेंच दी।[8]

इस प्रकार हम पाते है कि चम्पारण के चीनी मिलों की उत्पादों ने देश–विदेश में ख्याति तो अर्जित की परन्तु यहाँ के कृषकों एवं श्रमिकों पर बुरा प्रभाव पड़ा। क्योंकि एक तो उत्पादों का उचित मूल्य नहीं मिलने से किसान प्रभावित होते रहे; दूसरें श्रमिकों की मजदूरी की राशि भी कम होती थी जिससे क्रय शक्ति में सुधार होने की गुंजाइस कम होती।

दूसरी तरफ विभिन्न चीनी मिलों ने बहुत ही मामूली रकम अदा कर लगभग 40 हजार एकड़ जमीन हथिया ली थी जिसकी कीमत अरबों की है। इस संदर्भ में लोहिया कमीशन की उक्ति कुछ ज्यादा ही प्रासांगिक सी लगती है कि 'चम्पारण की चीनी मिल भी उसी प्रकार मनुष्य के रक्त से सनी है जिस प्रकार आज से अस्सी वर्ष पूर्व नील चम्पारणवासियों के रक्त से सना रहता था।'

दरअसल, चीनी मिल फार्मों के आस–पास बसे गाँव के लोगों को कई प्रकार की अन्य समस्याएँ भी होती थी। जैसे कि फार्म की जमीन से होकर न गुजरने देना, मवेशियों के फार्म में भूलवश प्रवेश कर जाने पर सजा देना आदि। इस प्रकार चीनी मिलों का समाज पर जहाँ सकारात्मक प्रभाव पड़ा, वहीं इसके नकारात्मक प्रभाव से भी साक्षात्कार होता है। इसका सामाजिक दुष्प्रभाव सहयोग समितियों के माध्यम से पड़ा। हालांकि इन सहयोग समितियों का गठन कृषकों हित संवर्धन के उद्देश्य से किया गया था। लेकिन ये सहयोगी संस्थाएँ बड़े किसानों के हाथों की कठपुतली बन कर रह गई। इसके सदस्यों के चुनावों में धन, बल, भय आदि का उपयोग होने से इसके जनतांत्रिक स्वरूप परिवर्तित हो गया और इस पर ईख (गन्ना) माफिया का प्रभाव बढ़ गया।

चीनी मिलों से सम्बंध बड़े–बड़े रसुखदारों का उदय हो गए तथा सामंती तत्व सक्रिय हो गई जहाँ कृषकों के शोषण का जाल बुना जाना असम्भव न था। यहाँ तक कि पूर्जा बांटने में भी बेईमानी की जाने लगी और इसमें बड़े किसानों के हितों पर छोटे किसानों के हितों की बली चढ़ा दी गई। स्थिति इतनी बदतर हो चली कि अब पूर्जियाँ बेची तक जाने लगी। को–ऑपरेटिव बैंक जनता के शोषण के लिए मिल मालिकों का भागीदार तक बन गई थी।

इतना ही नहीं चीनी मिलों पदाधिकारियों का हैसियत सामाजिक तौर पर कुछ ज्यादा ही बढ़ चली थी और ये बड़े पदाधिकारी अपने–अपने क्षेत्र में सामंतों से कम रसूख दबदबा नहीं रखते थे। इनकी पकड़ प्रशासनिक महकमें में बिहार विधानसभा तक थी।

लेकिन चम्पारण के चीनी मिल खासकर हरिनगर, लौरिया, तथा मझौलिया की चीनी मिलों के नियोजकों और इसके अधिकारियों ने यहाँ शिक्षा की अलख जगाने में अहम भूमिका अदा की। इन मिलों ने अपने–अपने क्षेत्रों में इंगलिस माध्यम की हाई स्कूल खोलकर बड़ी संख्या में स्थानीय कृषकों के बच्चों को शिक्षित करने पर जोर दिया। मझौलिया के मिल ने बालिकाओं के शिक्षा पर जोर दिया और लौरिया के जैन–प्रतिष्ठानों ने बालिकाओं के लिए मिडिल स्कूल तक चलाया। सुगौली और चनपटिया में भी इस प्रकार के सराहनीय पहल की गई। मिल के प्रबंधन के द्वारा विभिन्न स्तर के स्कूल संचालित किए गये जिसके कारण चम्पारण जिले की साक्षरता का प्रतिशत पहले की अपेक्षा ज्यादा सुधरा।

सामाजिक स्तर पर सांस्कृतिक मेल–मिलाप की प्रक्रिया पनपी। हालांकि इन मिल की कॉलोनियों में अंग्रेजी संस्कृति का ही बोलबाला रहा जो कमोबेस मिलों का प्रबंधन भारतीयों के हाथों में आने बाद भी बनी रही। मिल के अधिकारियों के द्वारा शिकार करना, क्लब संस्कृति एवं क्लब–मनोरंजन आदि की परम्परा इन मिल के कॉलोनियों में पनपी जिससे आस–पास के लोगों का प्रभावित होना स्वाभाविक था। सामाजिक प्रभावों के आकलन के क्रम में दृष्टिगोचर होता है कि चम्पारण के कृषि श्रमिकों की संख्या धनबाद और पुर्णिया जिले के बाद सर्वाधिक है। 1951 की जनगणना के आकड़ों के अनुसार चम्पारण में कृषि मजदूरों की संख्या जिले की कुल जनसंख्या के 15 प्रतिशत से अधिक थी।

एक विरोधाभाषी प्रवृतियाँ यह देखने को मिलती है कि चीनी मिलों में कार्यरत मजदूरों में से एक भी ऐसे मजदूर की जानकारी नहीं मिलती कि अब तक सामाजिक संरचना में सवर्ण कही जाने वाली चारों जातियों – ब्रह्मण, राजपूत, भूमिहार और कायस्थ वर्ग से रहा हो। इस प्रकार हम पाते हैं कि मिलों में कार्यरत तथा कृषि में संलग्न लोगों में से सर्वाधिक संख्या कृषि श्रमिकों और 'तथाकथित' दलित जातियों की ही थी, जो कहीं न कहीं सामाजिक स्तरीकरण को बढ़ावा देने वाले सामाजिक ताना–बाना पर प्रश्नचिन्ह खड़ा करने के लिए काफी है।

निष्कर्ष – अंत में हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि चम्पारण में स्थापित चीनी उद्योगों से समाज और अर्थव्यवस्था दोनों प्रभावित हुआ। अपने उत्कृष्ट उत्पादों के चलते इस क्षेत्र के चीनी मिलों का जहाँ देश स्तर पर पहचान मिली वहीं रोजगार के अवसर मिलने से समीप के लोगों के सामाजिक दशा में बदलाव भी आये। लेकिन पूर्व के स्थापित धारणा, कि चम्पारण के चीनी उद्योगों ने ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि श्रमिकों को परोक्ष या प्रत्यक्ष रोजगार उपलब्ध कराकर क्रय शक्ति बढ़ाने में मदद की, थोड़ी से बेइमानी प्रकृति की लगती है। यदि ऐसा होता तो यहाँ के ज्यादा श्रमिक दलित जातियों के थे, तो उनकी स्थिति सुधारनी चाहिए थी, बल्कि वास्तविक तौर पर ऐसा नहीं हुआ।

चूँकि जब मिले चालु अवस्था में रहती थी तो इसमें संलग्न श्रमिकों की संख्या ज्यादा होती थी। परन्तु शेष वर्ष में ये बेकार पड़ जाते थे। इस प्रकार यदि यहाँ के किसानों और श्रमिकों की क्रय शक्ति अच्छी होती तो ये स्वयं अपना जमीन औने–पौने दाम में बेचने को बाध्य क्यों होते? जबकि हमने पूर्व में देखा है कि किस प्रकार मिल मालिक जमीन को कम कीमत पर खरीद लेते थे। अतः स्पष्ट तौर पर यह कहना अप्रासंगिक नहीं होगा कि मिल मालिकों ने जितनी रोटियाँ दी उससे कहीं अधिक रोटियाँ चम्पारण के किसानों या श्रमिकों से छीन ली।

संदर्भ सूची :–

[1] गवर्नमेंट ऑफ बिहार, खण्ड शुगर डेवलपमेंट कमिटी की रिपोर्ट, 1935, अध्याय–6

[2] मिश्रा, गिरीश, एग्रेरियन प्रॉब्लम्स ऑफ पर्मानेन्ट सेटलमेंट, नई दिल्ली, 1978, पृ० 115–116

[3] मिश्रा, गिरीश, उपरोक्त, पृ० 115–116

[4] सिंह, आर० एस०, शुगर इंडस्ट्री, दिल्ली, 1988, पृ०–71

[5] राममनोहर लोहिया, कमीशन की रिपोर्ट, नई दिल्ली, 1950, पृ० 31

[6] मिश्रा, गिरीश, पूर्वोक्त, पृ०– 104

[7] राममनोहर लोहिया कमीशन की रिपोर्ट में उदृत।

[8] उपरोक्त,पृ०–33

[9] गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, सेन्सस ऑफ इंडिया, 1951, बिहार प्राइमरी सेन्सस एब्सट्रैक्ट।